श्रमण

स्वयं की अनेकान्तमयी समझ से तनावमुक्ति

डॉ० पारसमल अग्रवाल*

१. हमारा परिचय

"मैं कौन हूँ?" इस प्रश्न पर अनेकान्तमयी विचार करके हम यह देखेंगे कि इस प्रश्न के उत्तर से हमें न केवल आध्यात्मिक लाभ हो सकता है अपितु दिन-प्रतिदिन के व्यावहारिक जीवन में होने वाले तनाव भी बहुत कम हो सकते हैं।

जब हम अपने घर का दरवाजा खुलवाने हेतु घर के अन्दर से यह प्रश्न सुनते हैं "कौन?" तो हम बाहर से जो उत्तर सामान्यतया देते हैं वह उस परिस्थिति में समुचित उत्तर होता है। अनेकान्तवाद के दायरे में "मैं कौन हूँ?" प्रश्न का वह उत्तर भी उस परिस्थिति विशेष में ही स्वीकार किया जाता है।

जब हम किसी कार्यालय में किसी कार्य हेतु जाते हैं व अधिकारी सर्वप्रथम यह जानना चाहता है या प्रश्न पूछता है कि "आप कौन हैं?" तब हम सन्दर्भ के अनुसार अपने नाम के साथ हमारा पद या अपनी फर्म का नाम या पिता का नाम या पति का नाम आदि बताते हैं। हम इतनी जानकारी देते हैं कि जिस कार्य को उस अधिकारी से करवाना चाहते हैं उस कार्य से हमारा सम्बन्ध अधिकारी की समझ में आ जाए। अनेकान्तवाद ऐसे उत्तर को भी इस परिस्थिति में हमारे उचित परिचय के रूप में मान्यता प्रदान करता है।

इसी प्रकार विभिन्न परिस्थितियों में हमारा परिचय विभिन्न रूपों में होता है। कभी छविग्रह के लिये हम 'दर्शक' होते हैं तो कभी ट्रेन के 'यात्री' होते हैं तो कभी भी वकील के लिए 'मुवक्किल' होते हैं।

इस प्रकार हमारे परिचय परिस्थिति के अनुसार बदलते जाते हैं। हर जगह हमें परिचय देना होता है परन्तु कोई भी हमारे सारे परिचय नहीं सुनना चाहता है। आप बैंक में खाता खुलवाने जायें व वहां अपना परिचय देते हुए कहें कि मैं किसी का पति हूँ, किसी का मुवक्किल हूँ, किसी ट्रेन का यात्री रहा हूँ, आदि-आदि, तो बैंक मैनेजर आपको पागल समझेगा।

* प्रोफेसर, भौतिक विज्ञान, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म०प्र०)।

सारांश यह है कि "मैं कौन हूँ?" यह प्रश्न ऐसा है जिसके हजारों उत्तर संभव हैं, किन्तु प्रश्नकर्ता इसके हजारों उत्तर हमसे नहीं सुनना चाहता है। हर व्यक्ति कुछ ही पंक्तियों में इस प्रश्न का उत्तर चाहता है।

इसी बात को आगे बढ़ाते हुए यदि हम स्वयं से यह पूछें कि "मैं कौन हूँ?" एवं जैसे बैंक मैनेजर आपसे हजारों उत्तर नहीं सुनना चाहता है वैसे ही आप भी स्वयं से हजारों उत्तर न चाहते हुए अपने प्रयोजन का सीमित उत्तर सुनना चाहो तो जो भी उत्तर प्राप्त होगा वह इस प्रश्न का आध्यात्मिक उत्तर कहला सकेगा। अध्यात्म का प्रारंभ भी एक अपेक्षा से ऐसे ही उत्तर से होगा। उक्त वाक्य में 'प्रयोजन' शब्द की व्याख्या अपने आप में एक स्वतंत्र लेख की अपेक्षा रखती है। हम इस विस्तार को छोड़ते हुए यह कहना चाहेंगे कि अध्यात्म की दृष्टि में 'मैं' एक ऐसा पदार्थ हूँ जिसका शरीर के साथ विनाश नहीं होता है। मैं अविनाशी आत्मा हूँ।

२. बदलता परिचय एवं स्थायी परिचय

अध्यात्म के अनुसार इस समय तथाकथित मेरे शरीर के साथ जो ज्ञान गुण वाली आंखों से न दिखाई देने वाली अविनाशी चेतना या आत्मा है, वह मैं हूँ। बात यहाँ ही समाप्त नहीं होती है। "मैं कौन हूँ?" इस प्रश्न का आध्यात्मिक उत्तर थोड़ा और अधिक विशेष है। यदि इतना ही उत्तर होता तो इसे प्रश्नोत्तर के रूप में हम यहाँ नहीं उठाते, क्योंकि अध्यात्म के प्रारंभ में ही यह बताया जाता है कि अध्यात्म अपनी आत्मा को शरीर के साथ होते हुए भी शरीर से भिन्न प्रकार का तत्त्व स्वीकार करता है।

आगे बढ़ने के पूर्व एक सरल उदाहरण पर जरा विचार करें। यदि कोई मुझसे पूछे कि मेरे उज्जैन में स्थित स्थायी निवास का पता क्या है? व यदि इस प्रश्न के उत्तर में निम्नांकित दो प्रकार के उत्तर दूं तो आप उनको किस रूप में समझेंगे व स्वीकारेंगे?

१. मेरे निवास का पता २२०, विवेकानन्द कालोनी, उज्जैन (म०प्र०) है। यह मकान दो मंजिला है व गुलाबी रंग का है। क्यारी में गुलाब के फूल लग रहे हैं व कैक्टस के गमले भी बाहर से मकान में दिखाई देंगे।

२. मेरे निवास का पता २२०, विवेकानन्द कालोनी, उज्जैन (म०प्र०) है।

इन दो उत्तरों में से पहला उत्तर विस्तृत है किन्तु मकान का यह परिचय कुछ ही महीनों या वर्षों बाद गलत सिद्ध हो सकता है, क्योंकि गुलाबी रंग, गुलाब के फूल, कैक्टस आदि जो आज दिखाई देते हैं वे बदल सकते हैं। किन्तु जिस मित्र ने अपनी डायरी में दूसरा उत्तर लिखा है उसे यह मकान कुछ वर्षों बाद भी मिल सकेगा, वह रंग के बदलने या गुलाब के फूल न होने से भी भ्रमित नहीं होगा।

आप कह सकते हैं कि जिसने अपनी डायरी में पहला उत्तर लिखा है वह भी कुछ वर्षों बाद इसका लाभ ले सकता है। कुछ वर्षों बाद जब मकान का रंग गुलाबी न होकर किसी अन्य रंग का हो जायेगा या गुलाब के फूल की क्यारी न रहेगी तब भी पहले उत्तर को याद रखने वाला विवेक बुद्धि के अनुसार २२०, विवेकानन्द कालोनी, उज्जैन को ही मुख्य आधार मानकार इस मकान को पहचान सकता है।

इस तर्क का प्रति उत्तर यही है कि आपके तर्क ही यह स्वीकार कर रहे हैं कि डायरी में लिखे हुए पहले उत्तर की कांट-छांट विवेक बुद्धि से करके दूसरे उत्तर को ही मुख्य मानना है। यानी प्रश्नकर्ता स्वयं स्वीकार रहा है कि पहले उत्तर में काट-छाँट की आवश्यकता समय-समय पर हो सकती है। व यदि काट-छाँट में मुख्य बिन्दु मानने में भूल हो गई तो हानि होगी। अर्थात् यदि मकान के गुलाबी रंग या गुलाब के फूल या कैक्टस के गमलों को ही मुख्य बिन्दु मान लिया व मकान नंबर २२० को भूल गये तो हानि होगी।

इस उदाहरण से हम यह बताना चाहते हैं कि मकान के पते के मामले में मकान का नंबर, कालोनी का नाम एवं शहर, प्रदेश के अतिरिक्त जो भी जानकारी मकान के रंग, फूल, गमलों आदि के बारे में है वह सब मकान को खोजने में बाधक भी हो सकती है। हां, यदि हमें मुख्य जानकारी (नंबर, कालोनी, शहर) ध्यान में रहे व मुख्य जानकारी को ही प्रमुखता देने की मान्यता रहे तो कदाचित् अतिरिक्त बदलने वाली जानकारी किसी रूप में सहायक भी हो सकती है।

"मैं कौन हूँ?" इस प्रश्न के उत्तर में उपर्युक्त उदाहरण का बहुत उपयोग हो सकता है। जैसे मकान के पते के मामले में मकान नंबर, कालोनी एवं शहर मुख्य हैं व मकान का रंग, गुलाब के फूल, गमले आदि बदलने वाले हैं, उसी प्रकार जो कुछ भी हमारी आत्मा में स्थायी है उसे ही हमारी आत्मा का मुख्य परिचय मानना चाहिये। मुझे अमुक आदमी को क्रोधी देखते ही गुस्सा आता है- यह मेरा बदलने वाला परिचय है। ग्रीष्मकाल में मुझे कूलर की ठंडी हवा से प्रसन्नता मिलती है। यह भी मेरा बदलने वाला परिचय है। मैं देश की कई राजनीतिक दलों की दशा से अप्रसन्न हूँ- यह भी मेरा बदलने वाला परिचय है।

अत: मकान के रंग एवं मकान की क्यारी के फूलों की तरह ये सभी आत्मा के बदलने वाले परिचय हैं। इनको यदि हम अपना वास्तविक एवं स्थायी परिचय मान लेंगे तो हमें निराशा या तनाव या अहंकार ही हाथ लगेंगे। कैसे? जरा विचार करते हैं। मकान के मामले में तो स्पष्ट है कि रंग के आधार पर किसी मकान को याद रखेंगे तो रंग बदलने पर मकान तक नहीं पहुँच सकेंगे। हमारे बारे में भी यदि हमने अपना परिचय बदलने वाली अवस्थाओं के आधार पर माना तो सुहावनी स्थिति के बदलते

ही निराशा होगी व वर्तमान में अप्रिय स्थिति होने पर दु:ख होगा या अपराध भाव होगा।

३. बदलने वाले परिचय की अपूर्ण समझ से तनाव

उदाहरण के रूप में हम एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना करें जो अपना परिचय एक अच्छे वैज्ञानिक के रूप में मानता है। जब तक इसी मान्यता के अनुसार उसके कार्य होते जाएं व समाज भी उसको वैज्ञानिक मानता रहे तब तक तो सब ठीक चल सकता है, किन्तु जब एक के बाद एक परिस्थितियां, स्वास्थ्य के कारण या पारिवारिक कारण से या राजनीति के कारण से ऐसी होती रहें कि वह वैज्ञानिक कार्य न कर सके, तब उसको बहुत परेशानी होगी। उसकी परेशानी का मूल कारण यह होगा कि उसके "मैं वैज्ञानिक हूँ" वाले परिचय का अन्त हो रहा है। इसके विपरीत कोई व्यक्ति वैज्ञानिक कार्य तो करता रहे किन्तु अपना अस्तित्व (identity) इस रूप में न माने यानी इसे अपना अस्थायी या बदलता हुआ परिचय ही माने तो उसे विपरीत परिस्थिति का सामना करने में बहुत कम कठिनाई होगी। कोई आश्चर्य नहीं कि ऐसा व्यक्ति मानसिक तनाव की कमी के कारण बहुत अच्छे वैज्ञानिक का कार्य कर सके। यही बात अपने आपको बड़े परिवार वाला या धनवान या अच्छा खिलाड़ी या कुशल राजनीतिज्ञ या श्रेष्ठ व्यापारी या बढ़िया अभिनेता आदि के रूप में ही अपना अस्तित्व मानने में लागू होती है। बदलने वाले परिचय को बदलने वाला परिचय मानने में तनाव अल्प होता है।

यहां एक प्रश्न उपस्थित होता है— कोई व्यक्ति अच्छा खिलाड़ी है व उसे अच्छे खिलाड़ी के रूप में पूरे विश्व में सम्मान मिल चुका है व मिल रहा है। वह अब उम्र के कारण खेल से रिटायर हो गया है किन्तु अब भी वह अपने आपको प्रसिद्ध खिलाड़ी के रूप में मानते हुए ही प्रसन्न रहता है। यानी अब वह खिलाड़ी नहीं है यह स्वीकार करते हुए भी खिलाड़ी की स्मृतियों के आधार पर ही वर्तमान में प्रसन्न है। ऐसे व्यक्ति को बदलने वाले परिचय के आधार पर अपना परिचय या अस्तित्व मान लेने में क्या परेशानी हो सकती है? यही प्रश्न भूतपूर्व राष्ट्रपति, भूतपूर्व शासकीय अधिकारी आदि पर भी लागू हो सकता है। इसी प्रश्न को आगे बढ़ाते हुए यह भी कहा जा सकता है कि कोई अपना परिचय अच्छे धनी के रूप में माने व पूरे जीवन में उसे धन की कमी नहीं रही है या नहीं रहने वाली हो तो उसे अपना परिचय स्थायी रूप से धनी ही मान लेने में क्या हानि है?

इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने हेतु हम यह विचार कर सकते हैं कि यदि एक भूतपूर्व खिलाड़ी अपना परिचय एक प्रसिद्ध खिलाड़ी के रूप में मानता था व अब भी वह प्रसिद्ध है तो उसको यश में बदलाव महसूस नहीं होगा। फलत: उसकी इस प्रसिद्धि से जुड़ी हुई प्रसन्नता में अन्तर नहीं आयेगा। खेलना उसने चाहे बन्द कर दिया है किन्तु अच्छे खिलाड़ी के रूप में उसकी प्रसिद्धि बन्द नहीं हुई है। अत: प्रसिद्धि की भूख शान्त

होने से वह प्रसन्न है। किन्तु जब कुछ समय बाद जनता या समाचार पत्र उसका उल्लेख करना बंद कर देंगे तब उसे लगेगा कि अब वह प्रसिद्ध नहीं रहा है। तब या तो उसे उस बदलाव को या निराशा को स्वीकारना होगा। सारांश यह है कि जिस रूप में वह अपना परिचय या अस्तित्व मानता है या जिस परिचय के आधार पर वह गौरवान्वित एवं प्रसन्न होता है उस रूप में या उस परिचय में अप्रिय बदलाव आते ही उसे परेशानी या निराशा या तनाव हो सकते हैं।

एक व्यक्ति स्वयं को क्या मानता है, स्वयं को क्या बनाना चाहता है, व समाज उसे क्या मानता है, इन तीनों में जितना अधिक अन्तर होगा उतना अधिक तनाव उस व्यक्ति के जीवन में होगा। इस प्रकार की मान्यता आज आधुनिक मनोवैज्ञानिकों की है जिसका उल्लेख पाश्चात्य विद्वान् डोनाल्ड नोरकाक[१] ने भी किया है।

चाहे भूतपूर्व प्रसिद्ध खिलाड़ी हो या भूतपूर्व राष्ट्रपति या भूतपूर्व चन्द्रयात्री, सामान्यतया हर व्यक्ति किसी न किसी प्रकार के तनाव से ग्रसित हो सकता है। तनाव का विश्लेषण करने पर हम देखेंगे कि प्रत्येक तनाव का मूलभूत कारण या तो वह अपने से अन्य किसी और के परिचय या अस्तित्त्व में अपना परिचय या अस्तित्व मान लेता है या अपने बदलते हुए परिचय को बदलने योग्य परिचय न मानकर उसे अपना स्थायी परिचय या अस्तित्त्व मान लेता है।

वर्तमान में तनाव का कारण पारिवारिक अशान्ति हो, या स्वास्थ्य हो, या यश में कमी हो, या अपराध भाव हो, या और भी कुछ हो, जो भी कारण हो उसका विश्लेषण करने पर इसी सिद्धान्त की पुष्टि होगी कि दूसरे में "मैं" या बदलने योग्य अवस्था में "मैं" आरोपित करने से ही तनाव पैदा होता है।

इतना पढ़ने के उपरान्त कोई पाठक यह जानना चाहेगा कि क्या एक धनी, धन से प्रसन्नता अनुभव न करे? इस प्रश्न के समाधान हेतु एक सामान्य उदाहरण पर विचार करते हैं। कल्पना करें हम एक बालक के माता-पिता की जो बालक को एक मंहगा गुब्बारा खरीद कर दिलाते हैं व बालक के साथ वे गुब्बारे से खेल रहे हैं। बालक बहुत प्रसन्न है क्योंकि उसके पास अच्छा गुब्बारा है, उसके मम्मी-पापा उसके साथ खेल रहे हैं। अब यदि एक छोटा सा प्रश्न आप यहाँ पूछते हैं कि माता-पिता इससे प्रसन्न होंगे या नहीं? तो इसका उत्तर देने के पूर्व हम आप से यह जानना चाहेंगे कि वे गुब्बारे खरीदने की सामर्थ्य से उत्पन्नगर्व से प्रसन्न होंगे या गुब्बारे से प्रसन्न होंगे या बालक की प्रसन्नता से प्रसन्न होंगे? इस प्रश्न के उत्तर को धन से प्राप्त प्रसन्नता के बारे में लगाया जा सकता है। यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि माता-पिता गुब्बारे की सीमित जिन्दगी भी मान रहे हैं किन्तु फिर भी प्रसन्न हैं।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह भी चर्चा करने योग्य है कि क्या कोई व्यक्ति अपनी स्थायी पहचान किसी रूप में बनाने का प्रयास न करे? यानी, कोई क्रिकेट खिलाड़ी अपनी पहचान अच्छे क्रिकेट के खिलाड़ी के रूप में बनाना चाहे तो क्या हानि है? इसके उत्तर में यही कहना उचित होगा कि प्रधानमंत्री बनने का अर्थ यह नहीं है कि कुर्सी कभी भी छोड़ने को तैयार न हो। उचित समय पर एक क्रिकेट खिलाड़ी को भी सहर्ष रिटायर होने के लिए तैयार होना चाहिए।

और भी कई प्रश्न उपस्थित हो सकते हैं किन्तु उनकी चर्चा यहां आवश्यक नहीं है, क्योंकि मुख्यतः यह लेख जो तनावग्रस्त हैं उनके तनाव को कम करने हेतु लिखा जा रहा है। महत्त्वाकांक्षा, धनात्मक चिंतन आदि के कारण से यदि कोई व्यक्ति तनावग्रस्त है तो उस व्यक्ति ने महत्त्वाकांक्षा, धनात्मक चिंतन आदि को ठीक तरह से नहीं समझा है। यह विश्लेषण आशा का संचार करने हेतु है। आगे स्थायी परिचय के वर्णन में भी धनात्मकता का वर्णन किया जा रहा है।

४. स्थायी परिचय

स्थायी परिचय का अर्थ ऐसा परिचय है जो सदैव एक जैसा रहे। यहां हम "तथाकथित स्थायी परिचय" की बात नहीं कर रहे हैं। "स्थायी" शब्द का भारी से भारी अर्थ करते हुए निर्विवाद रूप से स्थायी शब्द का जो गहनतम अर्थ हो सकता है उसे स्वीकार करना है। भूतकाल, वर्तमानकाल एवं भविष्य, तीनों कालों में जो समान हो, शाश्वत हो, एक जैसा हो, अटल हो, अचल हो ऐसे परिचय को स्थायी परिचय कहा जाता है।

सरल शब्दों में कहा जाये तो आत्मा कभी चींटी के शरीर में विराजमान था या आज मनुष्य के शरीर को धारण किये हुए है या अगले जन्म में कोई अन्य शरीर धारण करे, इन सभी बदलती हुई अवस्थाओं में आत्मा के विचारों एवं सुख-दुःख के अनुभव में जो बदलाव आता है वह आत्मा का स्थायी परिचय नहीं है। इन सभी बदलती हुई अवस्थाओं में भी आत्मा का जो भाव स्थायी या एक जैसा रहता है वह आत्मा का स्थायी परिचय है। इस स्थायी भाव को जैन दर्शन की पारिभाषिक शब्दावली में पारिणामिक भाव[२] कहा जाता है। मेरी आत्मा में जो स्थायीपना है वह मेरा स्थायी परिचय है। आध्यात्मिक दृष्टि से वही मैं हूँ। इस परिचय में मैं 'अनेक' प्रकार का न होकर 'एक' ही रहता है।

स्पष्ट है कि आत्मा के इस स्थायी परिचय के अनुसार आत्मा न केवल दूसरे पदार्थों से भिन्न है अपितु मानसिक इच्छाओं, विकल्पों, क्रोध, अहंकार, वासना आदि से भी परे है क्योंकि ये सभी बदलते रहते हैं।

आत्मा के कई गुण आत्मा के साथ सदैव रहते हैं किन्तु अचेतन पदार्थों से भिन्नता दर्शाने वाले आत्मा के दर्शन एवं ज्ञान गुणों का कथन प्रधानता से किया जाता है।

अपनी आत्मा के स्थायी परिचय को बताने वाली आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा रचित निम्नांकित पंक्तियां[३] बहुत सुन्दर हैं-

अहमिक्को खलु सुद्धो दंसणणाणमइओ सदारूवी।
णवि अत्थि मज्झ किंचिवि अण्णं परमाणुमित्तपि।।

इसका भावार्थ यह है कि मैं सदैव एक हूँ, शुद्ध हूँ, दर्शन ज्ञानमय हूँ, अरूपी हूँ; किंचित्मात्र भी अन्य पदार्थ परमाणुमात्र भी मेरा नहीं है।

इसी स्थायी परिचय की तरफ ध्यान दिलाते हुए आचार्य अमृतचन्द्र कहते हैं[४]

शुद्धः शुद्ध स्वरसभरतः स्थायिभावत्वमेति।

अर्थात् यह आत्मा शुद्ध है, निजरस से परिपूर्ण है व स्थायीभावत्व को प्राप्त है।

इन्हीं आचार्य की निम्नांकित पंक्ति[५] भी अत्यन्त मनोहारी है-

शुद्धं चिन्मयमेकमेव परमं ज्योतिः सदैवास्म्यहम् ।

अर्थात् मैं तो सदा शुद्ध चैतन्यमय एक परमज्योति ही हूँ। आत्मा या स्वयं के संबन्ध में निम्नांकित उद्धरण भी विचारणीय है:

श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन को श्रीकृष्ण निम्न[६] रूप से समझाते हैं कि वह कौन है-

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः।।

इसका भावार्थ यह है कि शरीर से परे इन्द्रियां, इन्द्रियों से परे मन और मन से परे बुद्धि है एवं इस बुद्धि से परे 'वह' यानी आत्मा है।

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी स्थायी परिचय को 'परमार्थ' एवं बदलते हुए परिचय को माया बताते हुए कहते हैं-[७]

योग वियोग भोग भल मंदा, हित अनहित मध्यम भ्रम फन्दा।
जन्म मरण जंह लगि जग जालू, संपति विपति कर्म अरु कालू।।
धरणि धाम धन पुर परिवारू, स्वर्ग नरक जंह लगि व्यवहारू।

देखिय सुनिय गुनिय मन माहीं, मायाकृत परमारथ नाहीं।।

इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि समस्त योग, वियोग, भलाई-बुराई, कर्म, आदि परमार्थ नहीं हैं।

आधुनिक अमरीकी मनोवैज्ञानिक लूई हे लिखती हैं-[८]

"I am now perfect, whole and complete. I will always be perfect, whole and complete."

अर्थात् मैं परिपूर्ण हूँ एवं सदैव परिपूर्ण रहूँगा (रहूँगी)।

अमरीकी लेखक डाक्टर डेविड बर्न एक मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सक हैं व अत्यन्त निराश व्यक्तियों की चिकित्सा करने के विशेषज्ञ हैं। कई व्यक्तियों की आत्महत्या करने की मनोदशा समझकर उनकी मनोचिकित्सा डॉ० बर्न ने की है व इस दिशा में बहुत अनुसंधान कार्य भी किया है। उनकी मनोचिकित्सा का भी प्रमुख मंत्र यही है कि **स्वयं की दृष्टि में स्वयं का मूल्य** (self worth) **सदैव समान रहना चाहिए।** उनके अनुसार हमारी दृष्टि ऐसी होनी चाहिए कि हमारा मूल्य हमारी निगाहों में कभी भी न तो कम हो और न ही ज्यादा, सदैव स्थिर रहे।[९]

अमरीकी मनोवैज्ञानिक डॉ० वेन डायर जो कि विश्व में सर्वाधिक विक्रय वाली एक पुस्तक, *Your erroneous zones,* के लेखक हैं अपनी नवीन पुस्तक (शीर्षक: You'll see it when you believe it) के प्रारंभिक अध्याय में निम्नांकित पंक्तियां[१०] लिखते हैं:-

> "The principles is this book start with the premise that you are a soul with a body, rather than a body with a soul. That you are not a human being having spiritual experience, but rather a spiritual being having a human experience."

इन पंक्तियों का भावार्थ यह है कि आप आत्मा हैं जिसके साथ शरीर लगा हुआ है, न कि शरीर हैं जिसमें आत्मा स्थित है। आप चैतन्यता अनुभव करने वाले मनुष्य न होकर, स्वयं चैतन्य तत्त्व हैं।

इसी पुस्तक के अन्तिम अध्याय के निम्नांकित[११] शब्द भी ध्यान देने योग्य हैं-

> "It is like having a guardian angel or a loving observer as a part of your consciousness, a companion that you are always having compassionate silent

conversations with, a consciousness behind your form. That part is always perfect. There is no struggle or suffering in that part of you. That is your transcendent dimension of thought."

इन पंक्तियों का भावार्थ यह है कि आपकी चेतना का एक भाग ऐसा है जहां कोई संघर्ष नहीं है, कोई कष्ट नहीं है, सदैव परिपूर्ण है, वह सदैव एक दैवीय सहारे की तरह आपका शाश्वत साथी है।

५. स्वयं की यथार्थ समझ का अभ्यास

टाइपराइटर के अक्षरों की स्थिति का ज्ञान होते ही टाइप करना नहीं आ जाता है। कार के एक्सीलेरेटर, गिअर, क्लच, ब्रेक आदि की जानकारी लेते ही कार चलाना नहीं आ जाता है। जानकारी के बाद अभ्यास की आवश्यकता होती है। जानकारी अन्दर गहराई तक उतरनी चाहिए।

इसी प्रकार अपनी आत्मा के स्थायी परिचय एवं बदलने योग्य परिचय की जानकारी से विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है। वीणा, कार, टाइपराइटर आदि के अभ्यास की तरह इसके अभ्यास हेतु बार-बार इस तरह के वर्णनों का पठन, चिंतन एवं मनन की भी आवश्यकता है। अपने स्थायी परिचय एवं अस्थायी परिचय में भेद-ज्ञान को गहराई तक उतारने हेतु हमें अभ्यास करना होगा।

उक्त भेदज्ञान को हृदयंगम करने के बाद वे घटनाएं जो हमें व्यथित एवं तनावग्रस्त कर देती थीं अब व्यथित नहीं कर सकेंगी। ऐसी घटनाओं की आवृत्ति भी कम हो सकती है।

वर्षा से कच्चा मकान भी भीगता है व पक्का मकान भी किन्तु अन्तर यह रहता है कि पक्के मकान की छत से पानी मकान के अन्दर प्रवेश नहीं करता है अतः मकान-निवासी मकान के बाहर से भीगने के बावजूद उस वर्षा से व्यथित नहीं होता है। स्वयं की यथार्थ समझ हमारी आत्मा को वैसा ही पक्कापन प्रदान करती है।

'स्वयं की समझ' विषय पर चर्चा का समापन करते हुए बैंक के एक कैशियर का उदाहरण लेते हैं। यह कैशियर प्रति समय किसी को रुपये दे रहा होता है या ले रहा होता है। एक तरफ देने या लेने में पूरी सावधानी रखता है तो दूसरी तरफ उसी समय इसका भी उसे विश्वास एवं ज्ञान रहता है कि यदि किसी ने दस लाख रुपये जमा करायें हैं तो उन रुपयों से वह धनवान नहीं हो रहा है व कोई दस लाख रुपये ले रहा होता है तो वह गरीब नहीं हो रहा है। स्वयं की अनेकान्तमयी समझ के अभ्यास से भी ऐसा ही अनेकान्त हमारे जीवन में उतरेगा। हमारी क्रियाएं इस प्रकार होंगी कि बैंक

कैशियर के अनेकान्त की तरह समस्त लेन-देन के लिये हम किसी सीमा तक अपने को जिम्मेदार मानने के साथ हर समय हमें यह भी ध्यान रहेगा कि हमारी जेब में न तो कुछ आ रहा है और न ही हमारी जेब से कुछ जा रहा है। ऐसी दृष्टि के साथ जो कार्य भी हमसे होते रहेंगे उनमें इतनी विशेषता, विशालता एवं सुगंध होगी कि न केवल हम स्वयं अपितु हमारा पर्यावरण भी सुवासित हो सकेगा।

सन्दर्भ-

१. Donald Norfolk, *'Executive stress'*, (Warner Books, NewYork, 1986), page. 108 पर निम्नांकित पंक्तियां ध्यान देने योग्य हैं-

'Most people show a discrepancy between their public image, self.-image and ego-ideal (the sort of person they would like to become). They suffer stress and loss of self-esteem only when the gap between these concepts grows too great and reality as they perceive it bears no relation to either their hopes on public facade."

२. आचार्य उमास्वामी, **तत्त्वार्थसूत्र,** अध्याय २, सूत्र १ में ५ भवों का वर्णन हुआ है-

"औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य
स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च"

इन पांच भावों में पारिणामिक भाव ही कर्म निरपेक्ष है।

३. आचार्य कुन्दकुन्द, **समयसार,** गाथा ३८.

४. आचार्य अमृतचन्द्र, श्री समयसार-कलश, सोनगढ़ १९६५ ई०, ६/१८५.

५. वही, ६/१८५.

६. **श्रीमद्भगवद्गीता,** अध्याय ३, श्लोक ४२.

७. गोस्वामी तुलसीदास, **रामचरितमानस,** अयोध्याकाण्ड (प्रसंग लक्ष्मणनिषादसंवाद).

८. Louise L. Hay. 'You can heal your life', (Hay House, Santa Monica, USA) p. 45

९. "Acknowledge that everyone has one 'unit of worth' from the time they are born until the time they die. As an infant you may achieve very little, and yet you are still precious and worthwhile. And when you are old or ill, relaxed or, asleep or just doing 'nothing', you still have 'worth'. Your 'unit of worth' can't be measured and can never change, and it is the same for every one."
David D. Burns, 'Feeling Good', (SIGNET, Nal Panguin Inc., NewYork, 1980, pp. 301-2.

१०. Wayne W. Dyer, *'You'll see it when you believe it'*, (Arrow Books, London 1990), page 8.

११. *Ibid*, p. 273

हमारा परिचय (प्रश्न एक उत्तर अनेक)

जब अन्य द्वारा हमसे यह पूछा जाए, "आप कौन हैं?", तब उत्तर निम्नांकित प्रकार के होंगे।

जब यह प्रश्न हम स्वयं ही स्वयं से पूछें, तब उत्तर दो प्रकार के होंगे:

(व्यावहारिक परिचय)

मनुष्य, भारतीय, अमरीकी, पुत्र, मित्र, खिलाड़ी, व्यापारी, विद्वान्, साधु, सुन्दर, धनवान्..... (उचित विशेषणों एवं संबन्धों सहित उक्त पदवियां)

इसकी उपयोगिता क्या?

लोक व्यवहार इस प्रकार के उत्तर से ही चलता है।

सावधानी

(१) आवश्यकतानुसार पर्याप्त एवं सही परिचय की समझ से व्यक्ति की प्रमाणिकता बनती है।

(२) दुनियां के सामने हम कई रूपों में होते हैं किन्तु विभिन्न रूपों में रहते हुए भी हमारे असली या स्थायी परिचय को नहीं भूलना चाहिए।

(बदलने वाले परिचय)

अभिमानी, लालची, क्रोधी, दुःखी, प्रसन्न, तनावग्रस्त, रागी, द्वेषी,.....

इसकी उपयोगिता क्या?

इस परिचय से हमें ज्ञान हो सकता है कि हमारी आत्मा का विकास कितना हुआ है। यदि तनाव ग्रस्त एवं दुःखी हैं तो इसका अर्थ यह हुआ कि आत्मा का विकास अल्प हुआ है। स्थायी परिचय को न समझने के कारण बदलते हुए परिचय को ही अपना (स्थायी) परिचय मान लेना दुःख एवं तनावों का कारण है।

सावधानी

हम स्वयं हमारे सामने भी विभिन्न रूपों में बदलते हुए आते हैं। किन्तु इन सभी विभिन्न रूपों में बदले हुए भी हमारे असली या स्थायी परिचय को नहीं भूलना चाहिए।

(स्थायी परिचय)

सदैव एक जैसा हूँ, ज्ञान एवं चेतना लक्षण वाला हूँ, समस्त विकारों व वासनाओं से परे हूँ। समस्त अन्य पदार्थों से पृथक् हूँ।

इसकी उपयोगिता क्या?

यह शाश्वत वास्तविकता है जिसकी स्वीकृति एवं समझ में सुख एवं अस्वीकृति में दुःख है। इस सुख या आनन्द की प्राप्ति हेतु इन्द्रियों की आवश्यकता नहीं होती है।

सावधानी

जिस प्रकार निवास स्थान का स्थायी पता बताने हेतु मकान का रंग बताना आवश्यक नहीं होता है, रंग का उल्लेख गौण किया जाता है, इसका अर्थ यह नहीं होता है कि मकान रंगहीन है। इसी प्रकार आत्मा के स्थायी परिचय के आधार पर अपने को समझने हेतु बदलते हुए परिचय या लौकिक परिचय को गौण करने की आवश्यकता है, नकारने की आवश्यकता नहीं है।

डॉ० पारसमल अग्रवाल